Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity - ISSN : 2279-0233
Continuous Issue-28 | January – March 2017

'दौड़' : नये मूल्य की ज़द्दोजेहद में डूबते पुराने मूल्य

सन् 1990 के बाद भारत में जिस नयी आर्थिक नीति को लागू किया गया उसने देश में उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण का रास्ता खोल दिया है। बाजार आज माँग और आपूर्ति के सिद्धांत से संचालित हो रहा है। भूमंडलीकरण के प्रभाव के चलते वैश्विक अर्थव्यवस्था से जुड़े देशों की वस्तु, सेवा, पूंजी और तकनीक का दूसरे देशों तक बिना रोक-टोक आवागमन हो रहा है। इससे बहुराष्ट्रीय कंपनियों का भारत में न सिर्फ पदार्पण हुआ बल्कि भारतीय जन-मानस को इन कंपनियों ने बड़ी गहराई से प्रभावित और परिवर्तित भी किया। इससे भारतीय समाज और संस्कृति में प्राचीन काल से स्थापित व्यक्तिगत, सामाजिक, सांस्कृतिक, पारंपरिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि मूल्य गहराई से प्रभावित हुए, संक्रमित हुए और परिवर्तित भी हुए हैं। ममता कालिया का 'दौड़' उपन्यास भूमंडलीकरण की पृष्ठभूमि में लिखा गया है जिसमें इन सभी मूल्यों में हुए संक्रमण, विघटन या परिवर्तन का अध्ययन किया जा सकता है।

इस उपन्यास का नायक पवन है। वह इलाहाबाद के एक ऐसे परिवार से है जहाँ उसके माता-पिता लेखन-शिक्षा के व्यवसाय से जुड़े हुए हैं। इलाहाबाद के परिवेश और परिवार के व्यवसाय के कारण घर में साहित्यिक माहौल बना हुआ है। राकेश और रेखा के जीवन में आदर्श एवं परंपरागत मूल्यों का विशिष्ट स्थान है। वे पल-पल परिवर्तित होती दुनिया को अपने विशिष्ट दृष्टिकोण से देखते हैं। यह दृष्टिकोण एक तरफ उनके समय के सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों का परिचायक है वहीं दूसरी तरफ भूमंडलीकरण के दौर में मूल्यों में हो रहे संक्रमण-परिवर्तन को भी सूक्ष्मता के साथ उजागर करता है। वे अपनी संतानों (पवन और सघन) में ऐसे ही मूल्यों का आविर्भाव होता देखना चाहते हैं किंतु संतानें भूमंडलीकरणीय नये भाव-बोध के बीच शिक्षा प्राप्त कर रही हैं जो परिवार से प्राप्त मूल्यों को समकालीन संदर्भ में ग्रहण करती हैं। उपन्यास में पवन के जन्मदिन को मनाने का प्रसंग इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। यहाँ पवन के माता-पिता उसके जन्मदिन को परंपरागत तरीके से मनाते हुए मंदिर जाते हैं, स्कूल में सब को मिठाई खिलाते हैं और रात को अपने बेटे से फोन पर बात करते हैं अर्थात् वे अपनी धार्मिक आस्था और सामाजिकता का परिचय देते हैं। लेकिन पवन के लिए जन्मदिन मनाने का परिवार का यह तरीका अब इतना मायने नहीं रखता क्योंकि वह जिस बाजारवाद के परिवेश में रहता है वहाँ ग्रीटिंग-कार्ड के दिखावे का प्रचलन है। उपन्यास का यह प्रसंग दिखाता है कि किस प्रकार पवन के जैसी एक पूरी पीढ़ी अपनी धार्मिक आस्था एवं सामाजिक मूल्यों से दूर होती जा रही है। वहीं उसके माता-पिता की पीढ़ी अपने समय के मूल्यों को बनाय रखती है। यहाँ दो पीढ़ी के बीच मूल्यों का संघर्ष मुखर हो उठता है।

धर्म और अध्यात्म से जुड़े मूल्य प्राचीनकाल से मनुष्य को नियंत्रित करते रहे हैं और उसका मार्ग प्रशस्त करते रहे हैं। शंकराचार्य से लेकर स्वामी विवेकानन्द तक के धर्म एवं अध्यात्म से जुड़े विचार भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित करते रहे हैं लेकिन एम.बी.ए करके बहुराष्ट्रीय कंपनियों में प्रबंधन करने वाला पवन और उसकी पीढ़ी इन मूल्यों में ज्यादा विश्वास नहीं जताती। जो धर्म और अध्यात्म जीवन भर मनुष्य के साथ रहता था, अब उसके लिए नयी पीढ़ी के पास समय नहीं है। यह पीढ़ी मानती हैं कि "अब धर्म, दर्शन और अध्यात्म जीवन में हर समय रिसने वाले फोड़े नहीं है।"[1] वह सरल

मार्ग के शिविर में पाँच-छह दिन मेडिटेशन करने से मिलने वाली शांति को प्राधान्य देते हैं और फिर अगले दिन वापस काम पर चले जाते हैं। शंकराचार्य के अद्वैतवाद से यह पीढ़ी कंफ्यूज होती है जबकि सरल मार्ग की सीधी-साधी यथार्थवादी बातों पर विश्वास करती है। वस्तुतः पारंपरिक धार्मिक मूल्य के स्थान पर इस पीढ़ी में भौतिकवाद, अध्यात्म और यथार्थवाद की त्रिपथगा बहती दिखाई दे रही है।[2]

भारतीय समाज एवं संस्कृति में विवाह का विशेष महत्व है। भारत के अलग-अलग भूखंड में बसने वाले विभिन्न समाजों की अपनी अलग-अलग रीति-नीति और रसमें हैं जो विवाह के अवसर पर निभाई जाती हैं। पवन के माता-पिता रेखा और राकेश भी यह चाहते हैं कि उनका बेटा उनके समाज और संस्कृति की रीति-नीति और रसम के अनुसार विवाह के बंधन से जुड़े। इसके लिए रेखा समय-समय पर विशेष रूप से प्रयत्न भी करती है लेकिन पवन इन सब में ज्यादा विश्वास नहीं दिखाता। उसके लिए शादी एक 'डील' है। वह स्वयं शादी के लिए लड़की पसंद करता है और एक महीने बाद का शादी का समय भी तय कर लेता है। वह इस संबंध में अपने माता-पिता से विचार-विमर्श करना आवश्यक नहीं समझता, बस वह अपने माता-पिता को इसका संदेश भर दे देता है। वैसे इन सब के पीछे पवन का अपने माता-पिता की अवहेलना करने का कोई उद्देश्य नहीं है, वह तो सिर्फ अपनी शादी अपने तरीके से करने का 'फ्रीडम' चाहता है और इसी के चलते शादी के लिए लड़की और शादी का स्थान-रीति को पसंद कर लेता है। इससे संबंधित अपने माता-पिता की आपत्तियों को वह बहुत 'लाइट्ली' लेता है। यहाँ तक की खरमास में शादी न करने की धार्मिक मान्यता को भी दरकिनार करते हुए कहता है कि वह जिस समय स्टैला से शादी के बंधन में बंध जाएगा वही उसके लिए महत्वपूर्ण है। यहाँ पवन के माता-पिता परंपरा से चली आ रही धार्मिक मान्यताओं में विश्वास रखते हैं पर पवन समय के साथ इन मान्यताओं को नकारते हुए आगे बढ़ गया है।

इस संदर्भ में देखे तो जहाँ परंपरा से पारिवारिक-सामाजिक मूल्य विवाह के प्रसंग में माता-पिता की भूमिका को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है उसके स्थान पर समय और परिवेश बदलते ही संतानें यह सारा कार्य स्वयं ही करना चाहती हैं। पवन के माता-पिता पारंपरिक मूल्यों में विश्वास रखते हैं इसीलिए विवाह के इन सारे कार्य में अपनी उपस्थिति अनिवार्य मानते हैं, वहीं स्टैला और उसके माता-पिता इन मूल्यों में हुए परिवर्तन को स्वीकार चुके हैं। इसीलिए स्टैला द्वारा विवाह के लिए उचित पात्र ढूँढ लिये जाने का ईमेल जब उसके माता-पिता को मिलता है तब वे प्रसन्न होते हैं और ईमेल के द्वारा ही वे अपनी बेटी को बधाई भी दे देते हैं। रेखा और राकेश को पवन और स्टैला का विवाह 'सामूहिक विवाह' के रूप में किए जाने पर भी आपत्ति थी लेकिन सरल मार्ग के आश्रम में दस हजार दर्शकों की भीड़ में सामूहिक विवाह के दृश्य को देखते हैं वे महसूस करते हैं कि "इस आयोजन में पारंपरिक विवाह संस्कार से कहीं ज्यादा गरिमा और विश्वसनीयता है। न कहीं माता पिता की महाजनी भूमिका थी ना नाटकीयता।"[3]

भारतीय समाज एवं संस्कृति में विवाह संस्थान का विशेष महत्व हैं। यह विवाह संस्थान पति-पत्नी को साथ-साथ चलने वाले रथ के दो पहियों की तरह मानता है। दांपत्य जीवन के मूल्य पति-पत्नी के साथ रहने से लेकर उनके मधुर संबंधों को महत्व देते हैं। जीवन यापन से जुड़े रोजमर्रा के कार्यों के अतिरिक्त सुख-दुःख में दोनों परस्पर प्रतिबद्धता से एक-दूसरे के साथ रहे यह भी आवश्यक है। यद्यपि भारतीय समाज में पुरुष परंपरा से अधिकांशतः आर्थिक एवं घर के बाहर के कार्यों को देखता रहा है और स्त्री गृहस्थी को अच्छी तरह संभालती रही है। आधुनिकयुग में स्त्रियाँ भी पुरुष के कंधे से कंधा मिलाती हुई घर से बाहर निकलकर सभी क्षेत्रों में अपना योगदान देने लगीं। लेकिन वापस घर आने पर उसे अपने हिस्से के घर के काम से मुक्ति नहीं मिल पायी। किंतु भूमंडलीकरण के दौर में स्त्रियाँ बड़ी-बड़ी कंपनियों में उच्च पद पर

आसीन होकर अपनी योग्यता का कमाल दिखा रही हैं, अपना खुद का बिजनेस संभाल रही है तब दांपत्य जीवन के कुछ पारंपरिक मूल्यों में परिवर्तन आना स्वाभाविक है।

उपन्यास की नायिका स्टैला कंप्यूटर विजर्ड है, उसका खुद का बिजनेस है। इसे संभालने में उसे व्यस्तता से गुजरना पड़ता है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए पवन और उसके परिवार वाले स्टैला को सलवार सूट के पोशाक की अनिवार्यता से मुक्त करते हुए मनपसंद पोशाक पहनने की सुविधा दे देते हैं। दूसरे, शादी के बाद पवन की माँ स्टैला को भोजन बनाना सिखाना चाहती है ताकि वह पवन को अच्छा खाना खिला सके। लेकिन शादी के तुरंत बाद पवन चेन्नई की एक कंपनी में नौकरी स्वीकार कर स्टैला से दूर चला जाता है। स्टैला का बिजनेस अहमदाबाद-राजकोट के बीच चलता रहता है। अतः पवन स्वयं स्टैला को भोजन बनाने एवं सिखाने के कार्य से मुक्त कर देता है। यहाँ पवन दांपत्य जीवन में पति-पत्नी दोनों की समान स्वतंत्रता और सुविधा का पक्षधर दिखाई देता है। यद्यपि पवन द्वारा चेन्नई में नौकरी स्वीकार कर लेने पर उनके दांपत्य जीवन में एक लंबी दूरी आ जाती है। हालाँकि दोनों शादी से पहले ही इस बात से भली-भाती परिचित थे। अब इनका दांपत्य जीवन साथ रहने के स्थान पर सेटेलाइट और कंप्यूटर से संचालित होने लगता है। आगे चलकर स्थिति यह बनती है कि पवन नौकरी की व्यस्तता के कारण लंबे समय तक स्टैला से मिल नहीं पाता। एक स्थान पर वह अपनी माँ से इस बात का स्वीकार करता है कि वह स्टैला की शक्ल भी भूलता जा रहा था इसीलिए वह ढाका से सीधे उसे मिलने के लिए चला गया था।[4]

साहित्य, नृत्य, संगीत आदि कलाएँ भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग हैं। कलाएँ मनुष्य में विभिन्न प्रकार की संवेदनाओं का संचार करती है। प्रायः कलाओं में आस्था रखने वाले नैतिकता के अधिक करीब होते हैं। इन कलाओं में भी साहित्य का नैतिकता और मूल्यों से गहरा संबंध रहा है। भूमंडलीकरण के दौर में साहित्य और संगीत जैसी कलाओं में लोगों की रुचि किस प्रकार परिवर्तित हुई है इस बात का महत्वपूर्ण संदर्भ 'दौड़' से मिलता है। पूर्व का ऑक्सफोर्ड माने जाने वाले इलाहाबाद का पूरे भारत में साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है। साहित्यिक परिवेश के कारण 'दौड़' उपन्यास के रेखा और राकेश साहित्य प्रेमी माता-पिता के रूप में उपस्थित हैं। वे अपनी संतानों - पवन और सघन को बचपन से ही साहित्य की ओर उन्मुख करते हैं क्योंकि मनुष्य में मूल्य-निर्माण करने में साहित्य का अप्रतिम स्थान सदियों से रहा है। यही कारण है कि प्रेमचन्द के साहित्य से कफन, पुस की रात जैसी कहानियों का बड़ा गहरा असर उनके जेहन पर नक्श हो गया है। इलाहाबाद में साहित्य-संगीत जैसी कलाओं में लोगों की गहरी रुचि लंबे समय से बनी हुई है। लेकिन जहाँ बाजार की संकल्पना का व्यापक प्रभाव लोगों पर पड़ रहा है वैसे में मूल्य के वाहक साहित्य-संगीत कुछ हद तक दरकिनार हो जाते हैं। उपन्यास में अहमदाबाद में भीमसेन जोशी जैसे बड़े संगीतज्ञ के कार्यक्रम का आयोजन दिखाया गया है जहाँ भीमसेन जोशी के संगीत से भी अधिक तवज्जोह बाजार को दी जा रही है। कार्यक्रम में उपस्थित लोग अपनी उपस्थिति भर को ही महत्वपूर्ण मानते हुए चिप्स और पैप्सी में ही उलझे हुए हैं।

भूमंडलीकरण के चलते देश में अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने पदार्पण किया। इससे पहले भारत में स्थापित विभिन्न छोटी-बड़ी कंपनियों के कर्मचारी एक सीमा तक अपनी कंपनी से प्रतिबद्ध थे और उन कंपनियों के मालिक भी कुछ सीमा तक अपने कर्मचारियों का ध्यान रखते थे अर्थात् एक प्रकार का आत्मीयता एवं वफादारी का संबंध दिखाई देता था। लेकिन जैसा सर्वविदित है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ मुनाफे के उद्देश्य से ही दूसरे देश तक अपना व्यापार फैलाती हैं और मुनाफा प्राप्त करने के लिए कड़े से कड़े नियम एवं नियंत्रण लागू करती हैं ऐसे में मालिक और नौकर के बीच के संबंधों का कोई ज्यादा मूल्य

नहीं रह गया है। अब यह कंपनियाँ किसी भी वक्त अपने कर्मचारियों की छटनी करती हैं। वहीं कर्मचारी भी डूबती हुई कंपनी को उबारने का जिम्मा लेने से दूर भागते हैं। जिस कंपनी ने उन्हें प्रारंभिक स्टार्ट-अप देकर बहुत कुछ सिखाया उसी कंपनी को छोड़कर दूसरी कंपनी में उच्च पद और उच्च वेतन के लिए जाने में यह नयी पीढ़ी को कोई हिचकिचाहट नहीं होती। यहाँ बाजार से जुड़े मूल्यों में आए परिवर्तन को मूल्य-विघटन के रूप में देखा जा सकता है।

उपन्यास में अभिषेक का पात्र भूमंडलीकरण के दौर में बाजारवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति से पाठक को परिचित करवाता है। बाजार जनता को सामान्य जनता के रूप में न देखते हुए उपभोक्ता के रूप में देखता है। बाजार अपना उत्पाद बेचने के लिए एक से बढ़कर एक आकर्षक और लालायित करने वाले विज्ञापन बनाकर प्रस्तुत करता है। विज्ञापन की इसी दुनिया की एक कड़ी है - अभिषेक। वह विज्ञापन की दुनिया को 'खर्च और बिक्री की दुनिया' और स्वयं को 'विज्ञापनों द्वारा उपभोक्ता में जन्माएँ सपनों का सौदागर' मानता है। वह बाजार के प्रभाव के चलते विज्ञापन की दुनिया में हो रहे मूल्यों के अवमूल्यन से साक्षात्कार करवाता है। वह अपनी पत्नी से कहता है "तुम्हें पता है - डिटरजेंट की विज्ञापनबाजी में और भी अँधेर है। हम लोग सोना डिटरजेंट की एड फिल्म जब शूट कर रहे थे तो सीवर्स के क्लीन डिटर्जेंट से हमने बाल्टी में झाग उठवाए थे। क्लीन में सोना से ज्यादा झाग पैदा करने की ताकत है।'"[5] यहाँ कॉपीराईट की नैतिकता जोखिम में आ जाती है वहीं एक चीज दिखाकर दूसरी चीज बेचना सीधे तौर पर उपभोक्ताओं से धोखाधड़ी ही है। फिर भी अभिषेक को इस बात से कोई परहेज नहीं है क्योंकि वह तो स्पष्ट रूप से मानता है, "मैंने आई.आई.एम. में दो साल भाड़ नहीं झोंका। वहाँ से मार्केटिंग सीख कर निकला हूँ। आइ कैन सैल ए डैड रैट (मैं मरा हुआ चूहा भी बेच सकता हूँ) यह सच्चाई, नैतिकता सब मैं दर्जा चार तक मॉरल साइंस में पढ़ कर भूल चुका हुआ हूँ।" [6]

इतना ही नहीं आई. आई. एम. से पढ़कर बड़ी-बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों में काम करने वाले पवन को भी इसमें कोई अनैतिकता नहीं दिखाई देती क्योंकि उसके द्वारा प्राप्त की गयी शिक्षा में 'नैतिकता' जैसा कोई शब्द ही नहीं है। पवन कहता है, "दरअसल बाजार के अर्थशास्त्र में नैतिकता जैसा शब्द ला कर, राजुल (अभिषेक की पत्नी), तुम सिर्फ कनफ्यूजन फैला रही हो। मैंने अब तक पाँच सौ किताबें तो मैनेजमेंट और मार्केटिंग पर पढ़ी होंगी। उनमें नैतिकता पर कोई चैप्टर नहीं है।"[7] शिक्षा की यह स्थिति उच्च शिक्षा व्यवस्था में मूल्य-शिक्षा पर ही प्रश्न खड़ा करती है। ऐसी शिक्षा ही उसे आगे चलकर प्रोफेशनल एथिक्स पर बल देने पर मजबूर कर देती है। एक स्थान पर वह अपने पिता से कहता है कि "मेरे हर काम में आप यह क्या एथिक्स, मोरैलिटी जैसे भारी-भरकम पत्थर मारते रहते हैं। मैं जिस दुनिया में हूँ वहाँ एथिक्स नहीं, प्रोफेशनल एथिक्स की जरूरत है।"[8] शिक्षा की ऐसी स्थिति बने रहने से भविष्य में 'मानवाता' जोखिम में आ सकती है इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता। ऐसे मुद्दों पर पुराने मूल्य भी महत्वपूर्ण बन जाते हैं।

'दौड़' उपन्यास का नायक पवन एक अत्यंत महत्वाकांक्षी व्यक्ति बनकर पाठक के सामने आता है जो आज की पीढ़ी का प्रतिनिधित्व कर रहा है। अपनी महत्वाकांक्षाओं के चलते व्यक्तिगत मूल्यों पर ही सर्वाधिक बल देता है। एम.बी.ए. के अध्ययन के बाद पिता द्वारा इलाहाबाद में ही कोई नौकरी कर देने के सुझाव को न मानते हुए बड़े शहर में बड़ी कंपनी में नौकरी कर लेता है। इसके बाद माता-पिता से विचार-विमर्श किए बिना अपनी इच्छा से विवाह के लिए पात्र ढूँढ लेता है। शादी के बाद वह चेन्नई की मैल कंपनी में उच्च पद पर आसीन हो जाता है और पत्नी तथा माता-पिता दोनों से कई किलोमीटर दूर जाकर अपने कैरियर को ही महत्व देता है। इतना ही नहीं उपन्यास के अंत में जब उसे पता चलता है कि उसका भाई

सघन ताइवान की लोकल पॉलिटिक्स में हिस्सा ले रहा है जो सघन के लिए ख़तरनाक साबित हो सकता है, तब भी वह उसे मात्र एक बार समझाता है और उसके बाद उससे अपना पल्ला झाड़ लेता है। इस प्रकार पवन के समग्र व्यक्तित्व में वैयक्तिक मूल्य की ही प्रधानता दिखाई देती है इसके बरक्स वह पारिवारिक-सामाजिक मूल्यों की अवहेलना करता है।

उपन्यास में ताइवान में नौकरी प्राप्त करने वाला सघन भी इसी प्रकार का रुख अपनाता है। उसके माता-पिता ताइवान से उसे वापस आने का कड़ा अनुरोध करते हैं तब भी वह अपने कैरियर को ही महत्व देते हुए कुछ आवश्यक पैसे इकट्ठे होने के बाद ही वापस आने की बात करता है। इस प्रकार रेखा और राकेश अपने दोनों बेटों को अच्छे से अच्छी पढ़ाई करवाने के बाद भी पिछली जिंदगी में अकेलेपन के शिकार होते हैं, असुरक्षा का अनुभव करते हैं और यह सिर्फ उनके साथ ही नहीं हो रहा है बल्कि उस कॉलोनी में रहने वाले अधिकांश माता-पिता के साथ हो रहा है जिनकी संतानें पढ़-लिखकर कहीं दूर जाकर बस गई हैं। इससे सारी कॉलोनी सीनियर सिटीजन कॉलोनी ही बन गई है। यहाँ परिस्थिति पारंपरिक मूल्यों पर इस प्रकार हावी हो गई है कि पारिवारिक जीवन के मूल्य बिखर जाते हैं। यद्यपि पारिवारिक मूल्यों के बिखराव के बावजूद उस कॉलोनी में रहने वाले सभी सीनियर सिटीजन जरूरत पड़ने पर एक-दूसरे की यथाशक्ति मदद कर देते हैं। यहाँ कॉलोनी में बसे इन पुरानी पीढ़ी के लोगों में अभी भी सामाजिक मूल्य बरकरार हैं। यहाँ तक कि मिस्टर सोनी के देहांत पर पवन की ही पीढ़ी का भूषण मिसेज सोनी को हर तरह से मदद करता है। इतना ही नहीं वह मिस्टर सोनी की चिता को मुखाग्नि भी देता है। यह बात इस दिशा में भी संकेत करती है कि जो संतानें अब भी अपने माता-पिता के साथ रहती हैं उनमें एक सीमा तक पारिवारिक और सामाजिक मूल्य बने हुए हैं किंतु जो संतानें माता-पिता से दूर कहीं विदेश में जाकर बस गई हैं उनमें अब पारिवारिक मूल्य जैसा कुछ नहीं बचा है। मिस्टर सोनी का लड़का सिद्धार्थ इसका उदाहरण है जो पिता की चिता को मुखाग्नि देने के लिए विदेश से घर वापस आने में बहाने बना रहा है।

कुल मिलाकर भूमंडलीकरण और बाजारवाद की पृष्ठभूमि में लिखा गया 'दौड़' ऐसे उपन्यास के रूप में पाठक के सामने आता है जहाँ पर एम.बी.ए. का अध्ययन करने वाले और बड़ी-बड़ी कंपनियों में प्रबंधन की नौकरी करने वाले पवन और उसकी पीढ़ी के लोग परंपरागत रूप से चले आ रहे वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, साहित्यिक-सांस्कृतिक, धार्मिक मूल्यों में अभूतपूर्व परिवर्तन चाहते हैं। यह परिवर्तन एक सीमा तक उचित है पर परिवर्तन के नाम पर जब यह पीढ़ी स्वतंत्रता से स्वच्छंदता की ओर बढ़ जाती है तो स्वयं ही अकेलेपन, अजनबीपन, तनाव, घुटन आदि का शिकार भी हो जाती है। इसके विपरीत पवन के माता-पिता और उनकी पीढ़ी के लोग, परंपरागत पारिवारिक-सामाजिक मूल्यों में अटूट विश्वास रखते हैं और उपन्यास के अंत में अपनी-अपनी संतानों द्वारा अकेले छोड़ दिए जाने पर भी अपनी ही पीढ़ी के अन्य लोगों के सहारे जीवन-कष्टों से संघर्ष भी करते हैं। मूल्य विघटन के चलते बच्चों को सुरक्षित भविष्य देने वाले हर घर-परिवार के माता-पिता खुद एकदम असुरक्षित जीवन जीने के लिए विवश होते जा रहे हैं। नये मूल्य की ज़द्दोजेहद में लगी नयी पीढ़ी के सामने पुराने मूल्य डूबते जा रहे हैं।

संदर्भ

1. ममता कालिया. दौड़. प्रथम. दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2000. पृ. 45
2. वहीं, पृ. 46
3. वहीं, पृ. 61-62

4. वहीं, पृ. 83
5. वहीं, पृ. 39
6. वहीं, पृ. 37
7. वहीं, पृ. 39
8. वहीं, पृ. 66

****

डॉ. शिवांगकुमार भावसार
सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग
एम. पी. शाह आर्ट्स और सायन्स कॉलेज
सुरेन्द्रनगर
सौराष्ट्र विश्वविद्यालय, गुजरात

Copyright © 2012- 2017 KCG. All Rights Reserved. | Powered By: Knowledge Consortium of Gujarat